साहित्य और सिनेमा का अंतर्संबंध तथा फिल्मांतरण

संपादक :
संदीप गोरक्षनाथ काळे

सह संपादक :
सुनंदा कडुबाळ मोरे

आर. के. पब्लिकेशन
मुम्बई

अनुक्रम

शीर्षक	लेखक	पृ.क्र
■ पटकथा लेखन कौशल	प्रा. बापू चंदनशिवे	13
■ समकालीन हिंदी फिल्म : किसान एवं मजदूर वर्ग	डॉ. ईश्वर पवार	20
■ साहित्य, सिनेमा और समाज का अंतस्थ संबंध	डॉ. राणूजी कदम	24
■ साहित्य और सिनेमा का अंतर्संबंध	डॉ. नानासाहेब जावळे	28
■ हिंदी सिनेमा के सौ साल	जयराम गाडेकर	34
■ साहित्य का फिल्मांतरण : संभावनाएँ एवं सीमाएँ	प्रा. संदीप काळे	46
■ 'रंगरसिया' सिनेमा और राजा रवि वर्मा	प्रा. सुनंदा मोरे	53
■ हिंदी के प्रचार–प्रसार में हिंदी चित्रपट गीतों का योगदान	डॉ. सुब्राव जाधव	58
■ हिंदी सिनेमा में आदिवासी चेतना	प्रा. आशा वडणे	61
■ हिंदी साहित्य, सिनेमा और स्त्री विमर्श	प्रा. अविनाश मारूती कोल्हे	67
■ सिनेमा और हिंदी साहित्य	प्रा. धनेश मच्छिंद्र माने	72
■ साहित्य, समाज और सिनेमा	प्रा. केशव काकासाहेब ससे	76
■ साहित्य और सिनेमा का अंतःसंबंध	प्रा. ज्ञानेश्वर बगनर	79
■ साहित्य और सिनेमा की प्रासंगिकता	नानासाहेब बळीराम बसाडे	83

साहित्य समाज और सिनेमा

– श्री. ससे केशव काकासाहेब,

साहित्य और समाज का एक दूसरे के साथ घनिष्ठ संबंध है, उसके साथ सिनेमा भी जुड गया है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य को **"समाज का दर्पण"** कहा है। समाज और युग के साथ साथ जन आक्रोश, जनसंघर्ष, जनक्रांति, जनमुक्ति, जनहित, शोषक शोषित, सर्वहारा, पूँजीवादी, साम्राज्यवादी, जनआंदोलन, जन एकता, जनवाद, प्रगतिशील, राष्ट्रवाद, आतंकवाद, नारी–विमर्श, दलित विमर्श सांप्रदायिकता जैसे शब्दों का प्रयोग साहित्य में होने लगा। किसी भी देश के साहित्य सृजन में तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण होती हैं। इन परिस्थितियों पर वहाँ का समाज जीवन निर्भर होता है। साहित्य समाज के हित के लिये लिखा जाता है। जैसे हिंदी साहित्य के इतिहास को हम देखें तो उसके चार कालखंड हमारे सामने प्रस्तुत होते हैं। उन कालखंडों के साहित्य में उस समय की सामाजिक राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियाँ हमारे सामने प्रस्तुत होती हैं। किसी भी देश के समाज और संस्कृति का अध्ययन करते समय उस देश का साहित्य महत्वूपर्ण भूमिका निभाता है।

हिंदी साहित्य के इतिहास का हम कालखंडों के अनुसार अध्ययन करे तो उस कालखंड में बीते सामाजिक जीवन का चित्रण हमें मिलता है। आदिकालीन साहित्यकार राज दरबार में रहकर राजाओं के लिए प्रशंसापरक साहित्य का निर्माण करते थे। उसी प्रकार भक्तिकाल में शासन से त्रस्त सामाजिक जीवन का चित्रण उस समय के साहित्य में मिलता है। भक्तिकाल के साहित्यकारों या संतों ने अपने साहित्य के माध्यम से एक महत्वपूर्ण

भक्तिमार्ग का आरम्भ किया है।

निराला :

"जमींनदार है साहूकार है बनिया है व्यापारी है।
अंदर अंदर विकट कसाई बाहर खद्दरधारी है"।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि साहित्य और समाज को अलग नहीं किया जा सकता। साहित्यकार समाज हित के लिए लिखता है। जिस प्रकार साहित्य और समाज एक–दूसरे के बिना अधूरे है, उसी प्रकार सिनेमा, साहित्य और समाज दोनों का प्रथम उद्देश्य मनोरंजन है। दोनों ही समाज के लिए लोकमंगल की भावना चाहते हैं। साहित्य और सिनेमा की सृजनात्मकता और आस्वादन में अंतर है।

सिनेमा का निर्माण अकेला अभिनेता नहीं कर सकता। उसके लिए निर्देशक को कैमरामैन, अभिनेता, संपादक, आदि का सहारा लेना पड़ता है। सिनेमा के आस्वादन के लिये दर्शक को सिनेमाघर में जाना पड़ता है। उसमें अन्य दर्शक भी होते हैं। साहित्य और सिनेमा में निर्माण और आस्वादन की दृष्टि से भले ही अंतर हो लेकिन उसमें समाज और जीवन अंतर्निहित रहता है। साहित्य और सिनेमा का मुख्य उद्देश्य समाज को आनंद प्रदान करना होता है। साहित्य के साथ सिनेमा मानव जीवन का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। सिनेमा में भी शहरी जीवन संस्कृति, गावों, देहातों के जीवन और संस्कृति, आचार विचार आदि का यथा तथ्य चित्रण दिखाई देता है।

मौसम, आँधी, शतरंज के खिलाड़ी, आकाश, तमस, नवजीवन आदि साहित्य कृतियों पर सिनेमा का निर्माण किया गया। उसमें समाजव्याप्त विभिन्न समस्याओं, तत्कालीन परिस्थितियों, लोकजीवन का चित्रण दर्शकों के सामने प्रस्तुत हुआ है।

भारत देश में विभिन्न भाषा और जाति धर्म वाले लोग रहते हैं। इस विविधता में जीनेवाले लोगों में एकता लाने का कार्य साहित्य और सिनेमा के माध्यम से किया जाता है। साहित्य और सिनेमा ने हमे सिर्फ भारत ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय स्तर के समाज जीवन की जानकारी हमारे सामने

प्रस्तुत की है। प्रस्तुत विवेचन से स्पष्ट हो जाता है, कि साहित्य और सिनेमा बनावट और बुनावट की दृष्टि से भिन्न हों लेकिन उन्हें समाज से अलग नहीं किया जा सकता।

संदर्भ : हिंदी सिनेमा का समाजशास्त्र ले. जवरीमल्ल पारेख, साहित्य सृजन पत्रिका (2005)

■■